



भारत सरकार

भारत

का

विधि

आयोग

उच्चतम न्यायालय में न्यायालय फीस और कारपोरेट विधान

रिपोर्ट सं. 236

दिसम्बर, 2010

उच्चतम न्यायालय में न्यायालय फीस और कारपोरेट विधान

विषय सूची

पृष्ठ संख्या

1.	निर्देश	6
2.	पूर्व रिपोर्टें	8
3.	संवैधानिक दृष्टिकोण से मुद्दे की परीक्षा (अनुच्छेद 14)	11
4.	कारपोरेट विधान से संबंधित कतिपय ब्यौरे 17	
5.	विदेश में स्थिति	22
6.	न्यायालय और न्यायालय फीस की आसान पहुंच	23
7.	संक्षिप्तांश और सिफारिश	28
	परिशिष्ट	33-34

न्यायमूर्ति पी. वी. रेड्डी

(भूतपूर्व न्यायाधीश, भारत का

उच्चतम न्यायालय)

अध्यक्ष,

भारत का विधि आयोग

नई दिल्ली-110001

दूरभाष- 2301 9465 (निवास)

2338 4475 (कार्या.)

फैक्स- 2379 2475

अर्ध. शा.सं. 6(3)/ 75/2009-एल सी(एल एस) दिसम्बर 27, 2010

प्रिय माननीय डा. एम. वीरप्पा मोइली,

विषय:- उच्चतम न्यायालय में न्यायालय फीस और कारपोरेट विधान

मैं उपरोक्त विषय पर भारत के विधि आयोग की 236वीं रिपोर्ट अग्रेषित कर रहा हूँ।

उच्च न्यायालय (न्यायाधीशों की संख्या) संशोधन विधेयक, 2008 पर कार्मिक लोक शिकायत, विधि और न्याय की विभाग संबंधी संसदीय स्थायी समिति द्वारा अपनी 28वीं रिपोर्ट में व्यक्त विचारों के अनुसरण में, न्याय विभाग ने भारत के विधि आयोग से कारपोरेट सेक्टर पर उच्चतर न्यायालय फीस उद्गृहीत करने के विषय पर विचार करने का अनुरोध किया। यह महसूस किया गया कि कंपनियों द्वारा फाइल किए गए मामलों में अधिक पण लगे होने और इनके निपटान में काफी समय लगने के बावजूद उनसे बहुत कम न्यायालय फीस वसूल किया जाता है। अतः, संसदीय स्थायी समिति ने कारपोरेट वादकारियों पर मूल्यानुसार न्यायालय फीस उद्गृहीत करने के लिए अनुच्छेद 145 के अधीन विरचित उच्चतम न्यायालय नियमों में संशोधन करने का सुझाव दिया।

कार्या: भारतीय विधि संस्थान भवन, भगवान दास रोड, नई दिल्ली-110001

निवास : 1 जनपथ, नई दिल्ली- 110 001

ई-मेल : pv_reddi@yahoo.co.in

क्योंकि संसदीय स्थायी समिति के विचार विशेषकर उच्चतम न्यायालय में कारपोरेट वादकारियों के प्रतिनिर्देश से थे, इसलिए, हमने प्राथमिकतः उस मुद्दे पर विस्तार से परीक्षा की। यह उल्लेखनीय है कि संसद् उच्चतम न्यायालय और संघ राज्यक्षेत्रों की बाबत ही न्यायालय फीस अधिगृहीत करने के लिए सक्षम है।

आयोग ने यह मत व्यक्त किया है कि केवल कंपनियों/कारपोरेटों पर उच्च न्यायालय फीस उद्गृहीत करना विधितः न तो अनुज्ञेय होगा न ही व्यवहार्य। आयोग द्वारा प्रस्तावित समाधान अधिकतम एक लाख रुपए या इसी प्रकार के अधीन रहते हुए उच्चतम न्यायालय का अपील (सिविल) की बाबत संदेय मूल्यानुसार न्यायालय फीस को बढ़ाना है। इस समय अधिकतम 2000/- रुपए है और यह अधिकतम फीस 1950 के उच्चतम न्यायालय नियम द्वारा विहित की गई थी ; 1966 के नियम में यही प्रतिधारित किया गया है और अब भी यह अपरिवर्तित ही है। अतः, आयोग ने यह महसूस किया कि अधिकतम फीस बढ़ाने की आवश्यकता है जिससे कि उच्च मूल्य अपीलें जो मुख्यतः कंपनियों, फर्मों, न्यासों और विशेष अधिनियम के अधीन ए ओ पी, आदि फाइल की जाती हैं, पर ऊँची फीस लगाई जा सके। आयोग ने 250/- रुपए की न्यूनतम फीस और नियत न्यायालय फीस जो उच्चतम न्यायालय के आरंभ से ही वही बनी हुई है, के उर्ध्वगामी पुनरीक्षण का भी सुझाव दिया है। वहीं सिविल मामलों में उच्च न्यायालय के निर्णयों से उद्भूत अपीलों की बाबत केवल नियत न्यायालय फीस (यथावर्द्धित) प्रभारित करना युक्तियुक्त होगा जहां न्यायालय फीस विचारण और अपील दोनों प्रक्रमों पर मूल्यानुसार आधार पर पहले संदत्त

किया जाता है । अंततः, आयोग ने सुझाव दिया कि संसद द्वारा कोई विधान अधिनियमित करके उच्चतम न्यायालय द्वारा विरचित नियमों को तुरंत अधिक्रमण करने के बजाय, न्यायालय फीस के पुनरीक्षण के लिए उच्चतम न्यायालय से कहना उचित होगा क्योंकि यह अब तक लगभग 60 वर्षों से स्थिर है । उच्चतम न्यायालय तब एक समिति गठित करे और पुनरीक्षण के प्रश्न पर विचार करे ।

रिपोर्ट में यह स्पष्ट किया गया है कि न्यायालय फीस को न्यायालय चलाने हेतु राजस्व के मुख्य स्रोत के रूप में नहीं देखा जाना चाहिए और मूल्यानुसार न्यायालय फीस के मामले में अधिकतम सीमा विहित करने के सिद्धांत का पालन किया जाना चाहिए । आयोग ने इस पर भी बल दिया है कि आम लोगों को गुणात्मक विधिक सहायता प्रदान करने और न्यायालयों में जाने की आसान पहुंच दिलाने के कार्यवृत्त को न्यायालय की मात्रा से जोड़े बिना पूरा किया जाना चाहिए । उच्चतम न्यायालय और अन्य न्यायालयों में प्रवृत्त विधिक सहायता को निर्दिष्ट किया गया है ।

विधि आयोग की दो पूर्व रिपोर्टें अर्थात् 189वीं रिपोर्ट और 220वीं रिपोर्ट को समुचित स्थानों पर निर्दिष्ट किया गया है ।

संघ राज्यक्षेत्रों के संबंध में, उच्च न्यायालयों से प्राप्त अपेक्षित सूचना के पश्चात् संक्षिप्त पूरक रिपोर्ट दी जाएगी ।

सादर,

भवदीय,
ह/-
(पी. वी. रेड्डी)

डा. एम. वीरप्पा मोइली,
विधि और न्याय मंत्री,
भारत सरकार, शास्त्री भवन,
नई दिल्ली-110001.

1. निर्देश

1.1.1 उच्चतम न्यायालय (न्यायाधीशों की संख्या) संशोधन विधेयक, 2008 पर विचार करते हुए कार्मिक, लोक शिकायत, विधि और न्याय की विभाग संबंधी संसदीय स्थायी समिति द्वारा अपनी 28वीं रिपोर्ट¹ में की गई टिप्पणियों के आधार पर न्याय विभाग ने भारत के विधि आयोग² से कारपोरेटों के न्यायालय फीस के संदाय के विषय पर अलग से विचार करने का अनुरोध किया जिससे कि कारपोरेट सेक्टर से मूल्यानुसार आधार पर अधिक न्यायालय फीस की मांग की जा सके ।

1.1.2 संसदीय स्थायी समिति कारपोरेट सेक्टर के लिए भिन्न न्यायालय फीस उद्गृहीत करने के पक्ष में थी और तदनुसार यह सिफारिश³ की कि संविधान के अनुच्छेद 145 के निबंधनानुसार सुसंगत नियमों में संशोधन किए जाएं । अनुच्छेद 145 यह उपबंध करता है कि संसद् द्वारा बनाई गई किसी विधि के उपबंधों के अधीन रहते हुए उच्चतम न्यायालय समय-समय पर राष्ट्रपति के अनुमोदन से न्यायालय की पद्धति और प्रक्रिया के साधारणतया विनियमन के लिए नियम बना सकेगा जिसके अंतर्गत उप खण्ड (क) से (ज) तक में विनिर्दिष्ट विभिन्न मामले भी हैं । समिति ने यह मत व्यक्त किया कि कारपोरेट और कानूनी निकायों को उच्चतम न्यायालय में आवेदन करने के लिए अधिकतम मात्र 2000/- रुपए

¹ राज्य सभा के माननीय अध्यक्ष के 4 अगस्त, 2008 को प्रस्तुत उच्चतम न्यायालय (न्यायाधीशों की संख्या) संशोधन विधेयक, 2008 पर कार्मिक, लोक शिकायत, विधि और न्याय की विभाग संबंधी संसदीय स्थायी समिति की 28वीं रिपोर्ट ।

² न्याय विभाग पत्र सं. एल-11018/1/2002-न्या. तारीख 17 अगस्त, 2009. उक्त पत्र अनवधानता से न्यायाधीश (जांच) विधेयक, 2006 की संसदीय स्थायी समिति की 21वीं रिपोर्ट को निर्दिष्ट करता है ।

³ संसदीय स्थायी समिति की 28वीं रिपोर्ट का पैरा 7.4 और 7.5.

न्यायालय फीस अदा करनी पड़ती है और ऐसे अस्तित्व निम्नतम व्यय पर न्यायिक अवसंरचना का उपयोग करते हैं और ऐसे कारपोरेट निकायों के मुकदमों पर उच्चतम न्यायालय द्वारा काफी समय खर्च किया जाता है। समिति ने आगे यह मत व्यक्त किया कि कारपोरेट/वाणिज्यिक निकायों के पास अपने प्रबंधनाधीन काफी वित्तीय संसाधन होते हैं और निरन्तर उनके विवाद करोड़ों रुपए मूल्य के होते हैं, अतः, यह युक्तियुक्त होगा यदि उनसे विवाद के कुल मूल्य के 1% और 5% के बीच मूल्य आधार पर न्यायालय फीस अदा करने की अपेक्षा की जाए। स्थायी समिति ने आगे कुछ वित्तीय और अन्य अधिनियमितियों अर्थात् सीमा-शुल्क अधिनियम, केन्द्रीय उत्पाद अधिनियम, आयकर अधिनियम, उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, एम. आर. टी. पी. अधिनियम, भारतीय दूर संचार विनियामक प्राधिकरण अधिनियम, सेबी अधिनियम का विनिर्दिष्ट प्रतिनिर्देश किया जिसके अधीन कंपनियां अधिकतम 2000/- रुपए की फीस अदा कर उच्चतम न्यायालय में अपील कर सकती हैं जो बिल्कुल अपर्याप्त है। समिति ने इंगित किया कि कारपोरेट निकायों पर अधिक फीस प्रभारित करके उगाहे गए अतिरिक्त राजस्व का उपयोग राज्य द्वारा संविधान के अनुच्छेद 39क में अधिकथित निदेशों को पूरा करने के लिए किया जा सकता है। समिति ने महसूस किया कि मूल्यानुसार आधार पर न्यायालय फीस बढ़ाकर उच्चतम न्यायालय अपना राजस्व कई गुना बढ़ा सकता है और परिणामी राजस्व का उपयोग अधिक अनुदान के रूप में न्यायपालिका में हो सकता है। इसके अतिरिक्त, यह मत व्यक्त किया गया कि जहां कारपोरेट कानूनी निकाय फीस की न्यूनतम रकम अदा कर उच्चतम न्यायालय में आवेदन करने में समर्थ हैं वहीं गरीब और साधारण नागरिकों को न्याय पाने में अड़चन होती

है ।

1.2 उच्चतम न्यायालय नियम, 1966 से संलग्न न्यायालय फीस की सारणी (तीसरी अनुसूची का भाग 2 और 3) इस रिपोर्ट में (परिशिष्ट के रूप में) सम्मिलित की गई है ।

पूर्व रिपोर्टें

2.1 आरंभ में ही, यह उल्लेखनीय है कि भारत के विधि आयोग ने अपनी रिपोर्ट 189 (2004)⁴ में यह सिफारिश की थी कि रुपए के अवमूल्यन और मुद्रास्फीति में वृद्धि को ध्यान में रखते हुए न्यायालय फीस अधिनियम, 1870 की अनुसूची 2 में यथाविहित नियत न्यायालय फीस की दरों को समुचित रूप से पुनरीक्षित करने की आवश्यकता है। यह भी मत व्यक्त किया गया कि मूल्यानुसार न्यायालय फीस पुनरीक्षित किए जाने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि फीस दावा-मूल्य के अनुपात में संदत्त की जाएगी जो किसी दशा में मुद्रास्फीति के पश्चात् दावे वर्धित मूल्य को प्रतिबिम्बित करेगा। इसका यह अर्थ है कि उच्च पण वाले मामलों में मूल्यानुसार न्यायालय फीस के परिणामस्वरूप अधिक न्यायालय फीस लगेगी। सिफारिश यह थी कि अपने संबद्ध अधिनियमों के अधीन न आने वाले संघ राज्यक्षेत्रों का जहां तक संबंध है, यह पर्याप्त होगा यदि न्यायालय फीस अधिनियम, 1870 में यथाविहित न्यायालय फीस की दरों को कई वर्षों से रुपए के अवमूल्यन को ध्यान में रखते हुए बढ़ाया जाए। उक्त मत को दोहराते हुए इस आयोग का यह सुझाव है कि अधिकतम न्यायालय फीस जहां कहीं विहित है, को भी समय के अधिक अंतराल और परिस्थितियों के परिवर्तन को ध्यान में रखते हुए युक्तियुक्ततः बढ़ाया जाना चाहिए।

⁴ भारत का विधि आयोग, “न्यायालय फीस अवसंरचना का पुनरीक्षण” पर (189वीं रिपोर्ट) (2004) पृष्ठ 96, 112-113.

2.2 विधि आयोग ने अपनी 220वीं रिपोर्ट (2009)⁵ में प्रभार्य अधिकतम न्यायालय फीस नियत करने की आवश्यकता पर बल दिया। इसी संदर्भ में, यह उल्लेखनीय है कि दिल्ली और चंडीगढ़ में, कोई अधिकतम सीमा विहित नहीं है।

2.3 महत्वपूर्ण मुद्दे पर विचार आरंभ करने के पूर्व, हम संक्षेप में संसद् और राज्य विधान मंडलों की न्यायालय फीस के संबंध में विधायी शक्ति की स्थिति को पुनः स्मरण करना चाहते हैं। 189वीं रिपोर्ट में विस्तार से इस पहलू को स्पष्ट किया गया है और हम वहां से उद्धरणों को उद्धृत करना चाहते हैं :

“उपरोक्त प्रविष्टियों से यह स्पष्ट है कि जहां तक उच्चतम न्यायालय का संबंध है, न्यायालय फीस का विषय सूची I (संघ सूची) की प्रविष्टि 77 के अंतर्गत आता है। उच्च न्यायालय और अन्य अधीनस्थ न्यायालयों की न्यायालय फीस सूची 2 (राज्य सूची) की प्रविष्टि 3 के अंतर्गत आती हैं।”

सूची 1 की प्रविष्टि 96, सूची 2 की प्रविष्टि 66 और सूची 3 की प्रविष्टि 47 भी “फीस” के बारे में हैं किन्तु “किसी न्यायालय में ली गई फीस” को विनिर्दिष्ट: इन विशिष्ट प्रविष्टियों में अपवर्जित किया गया है।

क) उच्च न्यायालय और अधीनस्थ न्यायालयों में संदेय न्यायालय फीस पर विधि : यहां यह उल्लेख करना आवश्यक है कि

⁵ भारत का विधि आयोग, “अधीनस्थ सिविल न्यायालयों में प्रभार्य अधिकतम न्यायालय नियत करने की आवश्यकता” पर 220वीं रिपोर्ट (2009) पैराग्राफ 3 “सिफारिश”

“न्याय प्रशासन” से संबंधित प्रविष्टि मूलतः सूची 2 की प्रविष्टि 3 में किन्तु संविधान (बयालीसवाँ) संशोधन अधिनियम, 1976 के आधार पर 3.1.1977 से उक्त प्रविष्टि को सूची 2 में परिवर्तित किया गया है ।

यद्यपि न्याय प्रशासन अब सूची 3 की प्रविष्टि 11क के अधीन आता है इसलिए ‘किसी न्यायालय में ली गई फीस’ का विषय जिसे न्याय प्रशासन से संबद्ध कहा जा सकता है, ऊपरवर्णित सूची 3 की प्रविष्टि 47 के अधीन स्पष्ट वर्जन को ध्यान में रखते हुए सूची 3 के अधीन नहीं आता । इस संवैधानिक संशोधन का प्रभाव भी वही है अर्थात् न्यायालय फीस के विषयों पर विधान बनाने की शक्ति जहां तक उच्च न्यायालय और उनके अधीनस्थ न्यायालयों का संबंध है, राज्य विधानमंडल की सक्षमता के भीतर है ।

इस प्रकार, जहां तक संसद का संबंध है, सूची 1 की प्रविष्टि 77 के साथ पठित अनुच्छेद 246(1) के अधीन, यह उस न्यायालय फीस से संबंधित विधि को अधिनियमन कर सकती है जो उच्चतम न्यायालय में संदेय है और सूची 2 की प्रविष्टि 3 के साथ पठित अनुच्छेद 246(4) के अधीन यह किसी संघ राज्यक्षेत्र में स्थित अन्य न्यायालयों में संदेय न्यायालय फीसों के विधि अधिनियमित कर सकती है। किन्तु, किसी राज्य में अधिकारिता रखने वाले उच्च न्यायालयों और अन्य अधीनस्थ न्यायालयों के लिए न्यायालय फीस विषयक विधियां सूची 2 की प्रविष्टि 3 के साथ पठित अनुच्छेद 246(3) के अनुसार राज्य के विधान मंडल द्वारा ही बनाई जा सकती हैं।”

3. संवैधानिक दृष्टिकोण से मुद्दे की परीक्षा

(अनुच्छेद 14)

3.1 अब, हम इस प्रश्न पर विचार करेंगे कि क्या कारपोरेटों के लिए भिन्न और अधिक न्यायालय फीस विहित करना संवैधानिकतः अनुज्ञेय है। संविधान के अनुच्छेद 14 द्वारा गारंटीकृत समता का मूल अधिकार युक्तियुक्त वर्गीकरण को वर्जित नहीं करता। सभी वर्ग के व्यक्तियों और कराधान के सभी उद्देश्यों के लिए लागू कराधान (या फीस) का दर समरूप होने की न तो आवश्यकता है और न ही ऐसा होना चाहिए। वस्तुतः, भारत के उच्चतम न्यायालय और अन्य देशों के संवैधानिक न्यायालयों के अनेक विनिश्चयों में दोहराया गया यह सुस्थिर सिद्धांत है कि कराधान के मामले में विधानमंडल वर्गीकरण की व्यापक स्वतंत्रता का उपभोग करता है और विकल्प का उसका विस्तार अधिक व्यापक है। इस संबंध में हम पी. एम. अश्वथानारायण शेट्टी और अन्य बनाम कर्नाटक राज्य और अन्य (ए. आई. आर. 1989 एस. सी. 100) वाले मामले में उच्चतम न्यायालय के विनिश्चय को निर्दिष्ट करते हैं जिसमें तीन राज्यों की न्यायालय फीस अधिनियमितियों की संवैधानिक विधिमान्यता के प्रश्न पर विचार किया गया। उच्चतम न्यायालय ने इस प्रकार मत व्यक्त किया :-

“ यद्यपि आर्थिक विनियमन पर विचार करने वाले अन्य विधायी उपाय अनुच्छेद 14 की परिधि के बाहर नहीं हैं फिर भी यह सुमान्यताप्राप्त है कि जहां आर्थिक विनियमन के उपायों का संबद्ध है, राज्य व्यापक स्वातंत्र्य का उपभोग करता है। वित्तीय और आर्थिक विनियमन के इन उपायों में विभिन्न प्रतिकूल सामाजिक और आर्थिक मूल्य और हित का समायोजन और संतुलन तथा असमान प्रायः

असमान परस्पर विरोधी आर्थिक मानदंड का मूल्यांकन अंतर्वलित है । राज्य को यह विनिश्चित करना है कि वह किस आर्थिक और सामाजिक नीति को अपनाए और किन विभेदों से उन विशेष और आर्थिक नीतियों को आगे बढ़ाया जा सकता है । इन वित्तीय समायोजनों के अंतर्निहित जटिलता को ध्यान में रखते हुए, न्यायालयों ने विधान मंडल को आर्थिक और सामाजिक नीतियों की अपनी प्राथमिकताओं और चुनी हुई व्यवस्था को हर संभव और युक्तियुक्त तरीके से प्रभावी बनाने के मामले में व्यापक विवेकाधिकार प्रदान किया । यदि आर्थिक उपाय के समायोजन के दो या अधिक तरीके उपलब्ध हों तो उनमें से एक के पक्ष में विधायी अधिमान को विधायी बुद्धिमत्ता की कमी या यह कि अपनाया गया तरीका सर्वोत्तम नहीं है या यह कि प्रतिस्पर्धी हितों और दावों के समायोजन के बेहतर रास्ते थे, के आधार पर प्रश्नगत नहीं किया जा सकता है । विधानमंडल के पास ऐसे क्षेत्रों में व्यापक स्वतंत्रता है । कर के भार के सिद्धांतों का सादृश्य “फीस” के भार के वितरण की विधिमान्यता पर विचार करने के लिए भी अनुपयुक्त नहीं हो सकता है ।” (पैरा 30)

पूर्वतर मामलों में अधिकथित सिद्धांतों को उद्धृत करते हुए, यह मत व्यक्त किया गया :—

“ आर्थिक मामलों की जटिलता और उनके लिए व्यावहारिक हल निकालना एक चुनौती है और अवधारणात्मक मानसिक प्रतिरूप के बाहर है । किसी नीति की सामाजिक और आर्थिक समस्याएं पूर्व विचारित धारणा के अनुकूल नहीं होती हैं

जिसके कि वे पूर्व अवधारित समाधानों के प्रति उत्तरदायी हो सकें।” (पैरा 31)

तब पैरा 32 में यह इंगित किया गया कि “यह प्रश्न कि क्या कर या फीस की माप मूल्यानुसार या मात्रानुसार की जाए, पुनः वित्तीय नीति का विषय है।”

3.2 आयकर अधिकारी, शिलांग बनाम एन. टाकिन राय रियमबाई (ए. आई. आर. 1976 एस. सी. 670) वाले मामले में यह मत व्यक्त किया गया :-

“ न ही मात्र यह तथ्य स्वयं में विधि को अविधिमान्य ठहराने का एक आधार है कि कोई कर, उसी प्रवर्ग में कुछ पर अधिक गुरुता से लगाया जाता है। यह स्वयं चयन के भीतर है तभी विधि असमानतः लागू होती है और विधिमान्य वर्गीकरण के आधार पर न्यायोचित नहीं ठहराई जा सकती है कि वहां अनुच्छेद 14 का अतिक्रमण होगा।” (परा 20)

3.3 अश्वथनारायण शेटी वाले मामले में, उच्चतम न्यायालय ने राजस्थान और कर्नाटक न्यायालय फीस और वाद मूल्यांकन अधिनियमों की संवैधानिक विधिमान्यता को कायम रखा। तथापि, बाम्बे न्यायालय फीस अधिनियम के एक विशिष्ट उपबंध को असंवैधानिक ठहराते हुए अभिखंडित कर दिया। कारण यह था कि अन्य कार्यवाहियों के मामलों की तरह ऊपरी सीमा विहित किए बिना मूल्यानुसार प्रोबेट और प्रशासन पत्रों की मंजूरी के लिए कार्यवाहियां न्यायालय फीस विभेदकारी हैं। उच्चतम न्यायालय उच्च न्यायालय से सहमत था कि उद्देश्य के प्रति तार्किक संबंध वाले वादकारियों

के दो वर्गों के बीच का बोधगम्य या तार्किक अन्तर नहीं था । उच्चतम न्यायालय ने यह ध्यान दिया कि ऐसा पक्षकार जो प्रोबेट कार्यवाही में वादी था, से 6.14 लाख रुपए न्यायालय फीस के रूप में भुगतान करने के लिए कहा गया जबकि यदि यह सिविल वाद होता तो वादों में न्यायालय फीस के लिए विहित सीमा को ध्यान में रखते हुए बहुत कम रुपए देना होता । उच्चतम न्यायालय ने उच्च न्यायालय के निम्नलिखित विचारों को अनुमोदित किया :

“ इसके सिवाय इस दलील का कोई उत्तर नहीं है कि विधानमंडल ने प्रोबेट चाहने वालों को अनुतोष मंजूर करना ठीक नहीं समझा जबकि सिविल वाद के वादियों को ऐसी ऊपरी सीमा के योग्य समझा गया । विभेद संविधान के अनुच्छेद 14 में समाविष्ट विधियों के समान संरक्षण की प्रत्याभूति द्वारा प्रतिषिद्ध वर्ग विधान का एक भाग है । इस आधार पर भी मद 10 को कायम नहीं रखा जा सकता है ।” (पैरा 36)

3.4 उच्चतम न्यायालय ने यह भी मत व्यक्त किया कि बड़े दावों में ऊपरी सीमा के बिना छोटे दावों में भी न्यायालय फीस की उच्च दरों का आदेश “मनमानापन और असंवैधानिकता के घोर सन्निकट है ।”

3.5 वित्तीय क्षमता पर आधारित कराधन के प्रयोजन के लिए वर्गीकरण को विक्रय कर और अन्य कर विधियों के अधीन उद्भूत कतिपय अन्य मामलों में उच्चतम न्यायालय द्वारा अनुज्ञेय वर्गीकरण अभिनिर्धारित किया गया है ।

3.6 अतः, न्यायालय का यह मत है कि कारपोरेट सेक्टर या

वादकारियों के किसी अन्य प्रवर्ग के लिए उच्च न्यायालय फीस का आदेश स्वतः किसी संवैधानिक सिद्धांत का उल्लंघन नहीं करेगा बशर्ते उन्हें भिन्न आधार पर मानने के संबंध में युक्तियुक्त न्यायौचित्य हो। वर्गीकरण के समर्थन के लिए सुबोधगम्य अन्तर होना चाहिए। आयोग इस बिन्दु को स्पष्ट कर रहा है क्योंकि पूर्व रिपोर्ट (220वीं रिपोर्ट)⁶ में यह मत व्यक्त किया गया था कि न्यायालय फीसों में कुछ हद कर एकरूपता होनी चाहिए और भिन्न-भिन्न वादकारियों से भिन्न-भिन्न बर्ताव करने का कोई औचित्य नहीं है। विधि आयोग द्वारा वर्तमान स्वरूप में विवादक पर विचार नहीं किया गया है।

3.7 तथापि, तब यह प्रश्न उठेगा कि संपन्न व्यक्तियों और व्यक्तियों के संगमों को निकालकर क्यों अकेले कारपोरेटों को उच्च दर की न्यायालय फीसों के अधीन लाया जाए। यदि अधिक भुगतान करने की क्षमता ही मानदंड है, तो कारपोरेटों और समानतः अधिक गैर-सम्पन्न अन्य वादकारियों के बीच अन्तर क्यों किया जाए? वस्तुतः, यह एक विचार-बिंदु है जिस पर काफी पूर्व 1984 में विधि मंत्रियों ने विचार किया। अक्टूबर, 1984 में विधि मंत्रियों की समिति ने न्यायालय फीस की तार्किकता के मुद्दे की परीक्षा की और कारपोरेट सेक्टर के लिए विभिन्न न्यायालय फीस के सुझाव को समिति द्वारा निम्नलिखित टिप्पण के साथ अस्वीकार कर दिया गया :—

“ केरल और पश्चिमी बंगाल के महाधिवक्ता का यह मत था कि कंपनियों के न्यायालय फीस के मामलों में प्रस्तावित रियायतें देने का

कोई औचित्य नहीं है। उन लोगों ने आगे कहा कि व्यक्तियों और कारपोरेट निकायों/कंपनियों द्वारा भुगतान के लिए न्यायालय फीस के भिन्न-भिन्न दर विहित किए जा सकते हैं। उन्होंने यह महसूस किया कि ऐसा करने के लिए कोई संवैधानिक वर्जन नहीं हो सकता है। (पैरा 8-15)

चाहे वाद व्यक्ति या कंपनी द्वारा फाइल किया गया हो, न्यायालय द्वारा दी गई सेवा एक जैसी ही होती है। यह तर्क दिया जा सकता है कि कंपनी/कारपोरेट निकाय भुगतान करने की स्थिति में है। किन्तु ऐसी स्थिति कई व्यक्तियों के संबंध में भी हो सकती है। तब न्यायालय फीस के भिन्न-भिन्न दर को कैसे न्यायोचित ठहराया जा सकता है? इसके अलावा, कंपनियों में भी, ठोस और कमजोर कंपनियां हो सकती हैं। आकार, वित्तीय क्षमता, आदि में भी अंतर हो सकता है। पुनः, यदि भिन्न-भिन्न दर को स्वीकार किया जाता है तो सरकारी उपक्रम भी इसके अंतर्गत आएंगे।” (पैरा 8.16)

3.8 दूसरा पहलू जिस पर विचार किया जाना चाहिए कि यदि एक वर्ग के रूप में कंपनियों को विशेष बर्ताव के लिए चुना जाता है तो ऐसी कंपनियों के लिए कम न्यायालय फीस का उपबंध करने की आवश्यकता है जिनके पास सारवान आस्तियां नहीं हैं या लाभ नहीं कमातीं। यह अनुचित होगा यदि सभी कंपनियां जो न्यायालयों में मुकदमे लड़ती हैं, के साथ उनकी वित्तीय स्थिति को ध्यान दिए बिना एक जैसा बर्ताव किया जाता है। यदि ऐसा है, तो कंपनियों का उप-वर्गीकरण किया जाए और उनके लिए फीस के दो सेट बनाए जाएं। यह न्यायालय फीस ढांचे को जटिल बनाएगा।

4. कारपोरेट मुकदमेबाजी से संबंधित कतिपय ब्यौरे

4.1 उपलब्ध अनुकल्पी विकल्प पर चर्चा करने के पूर्व, आयोग न्यायालय फीस राजस्व और उच्चतम न्यायालय में फाइल किए गए कारपोरेट मामलों से संबंधित कतिपय आंकड़े अभिलेख पर रखना चाहेगा। वर्ष 2007-08, 2008-09 और 2009-10 के लिए न्यायालय फीसों से प्राप्त सकल राजस्व क्रमशः 119 लाख रुपए, 128 लाख रुपए और 133 लाख रुपए है। पूर्ववर्ती वर्ष (2009) के दौरान उच्चतम न्यायालय को कुल बजट आबंटन 100 करोड़ रुपए से अधिक था। आयोग कुछ प्रयास करने के पश्चात् कंपनियों/कारपोरेटों द्वारा संस्थित सिविल अपीलों (जिसके अंतर्गत कराधान और अन्य विशेष अधिनियमों से संबंधित मामले हैं), की अलग पहचान करने के लिए दो मास अर्थात् जनवरी और फरवरी, 2010 में फाइल किए गए मामलों के ब्यौरे अभिप्राप्त कर सका। अपीलों से 2000/- रुपए अधिकतम फीस प्राप्त हुई।

4.2 जनवरी मास 2010 में रजिस्ट्रीकृत विशेष इजाजत याचिकाएं (एस. एल. पी. - सिविल) 2507 थीं और फरवरी में 2187 थीं। उनमें से जनवरी में 123 और फरवरी में 185 एस. एल.पी. - सिविल प्राइवेट सेक्टर कंपनियों से संबंधित हैं। इसी अवधि के दौरान, कुल 449 और 235 एस. एल. पी. (सिविल) पब्लिक सेक्टर कंपनियों/उपक्रमों द्वारा फाइल की गई थीं। इस प्रकार, जहां तक पब्लिक सेक्टर उपक्रमों से भिन्न कंपनियों का संबंध है, एक मास में फाइल की गई एस. एल. पी. (सिविल) मामलों की औसत संख्या लगभग 150 मामला निकलती है। पब्लिक सेक्टर उपक्रम

सहित कंपनियों द्वारा फाइल किए गए अधिकांश मामले दूर संचार विवाद, विद्युत विनियमन, उपभोक्ता विवाद आदि से संबंधित विशेष अधिनियमितियों के अधीन कराधन मामले और अपीलों हैं। विशेष इजाजत याचिकाओं के लिए, उच्च न्यायालयों में रिट याचिकाओं की तरह नाममात्र की नियत दर प्रभारित की जाती है। जब विशेष इजाजत याचिकाओं को सुनवाई के पश्चात् स्वीकार किया जाता है तो उन विशेष इजाजत याचिकाओं को सिविल अपीलों में संपरिवर्तित किया जाएगा और सिविल अपीलों के लिए इस समय प्रभार्य अधिकतम फीस 2000/- रुपए है। लगभग 50% या अधिक विशेष इजाजत याचिकाएं सामान्यतः ग्रहण स्तर पर ही खारिज हो जाती हैं। इस प्रकार, यदि यह मान लिया जाए कि प्राइवेट सेक्टर कंपनियों के लगभग 70 या 80 मामलों को सिविल अपीलों के रूप में संख्याकित किया जाता है तो ऐसी कंपनियों से जिनकी अपीलों इस प्रकार ग्रहण की जाती हैं, से इस समय उगाहे जाने वाला न्यायालय फीस राजस्व लगभग 1.60 लाख रुपए प्रति मास तक (लगभग 19 लाख प्रति वर्ष) है।

4.3 हमें विभिन्न विशेष अधिनियमों के अधीन सीगैट, आइटैट, टीडीसैट, विद्युत अपील अधिकरण, उपभोक्ता विवाद अपील अधिकरण जैसे कानूनी अधिकरणों को फाइल की गई अपीलों के लिए संदेय संस्थागत फीस के पैटर्न पर ध्यान देना होगा। अधिकतम फीस 10,000/- रुपए है। तथापि, प्रतिभूति अपील अधिकरण⁷ और प्रतिस्पर्द्धा अपील अधिकरण⁸ को अपील

⁷ प्रतिभूति संविदा (विनियमन) (प्रतिभूति अपील अधिकरण को अपील) नियम, 2000 का नियम 9(2).

करने के लिए संदेय अधिकतम फीस क्रमशः 1.5 लाख रुपए और 3 लाख रुपए के बीच है और न्यूनतम फीस 500/- रुपए और 1000/- रुपए है । उक्त दो अधिनियमों के अधीन इस समय बहुत कम अपीलें उच्चतम न्यायालय में लंबित हैं । आई टी. ए. टी. के आदेश (आयकर अधिनियम के अधीन) और अन्य कराधान कानूनों से उद्भूत उच्च न्यायालय को अपील करने के लिए दिल्ली उच्च न्यायालय सहित उच्च न्यायालयों द्वारा प्रभारित फीस नाममात्र हैं । अधिकरण को अपील करने के प्रक्रम पर भी संदेय की जाने वाली फीस बिल्कुल कम है, जैसा पहले उल्लेख किया गया है । किसी राज्य या संघ राज्यक्षेत्र में कराधान और अन्य वित्तीय अधिनियमितियों से उद्भूत अपीलों/निर्देशों के संबंध में मूल्यानुसार न्यायालय फीस प्रभारित नहीं की जाती है । प्रसामान्यतः, उक्त अधिनियमितियों के अधीन उद्भूत अपीलों में भारी पण लगे होते हैं और ये अधिकांशतः कंपनियों, न्यासों, फर्मों और सोसाइटियों द्वारा फाइल की गई हैं । अन्य प्रवर्ग की अपीलों, जिसमें कंपनियों और फर्मों द्वारा फाइल की गई अपीलों में भारी पण लगे हैं, माध्यस्थ और सुलह अधिनियम, 1996 के अधीन हैं । उच्चतम न्यायालय के रजिस्ट्रार कार्यालय से प्राप्त सूचना के अनुसार उक्त अधिनियम के अधीन वर्ष 2010 के अक्टूबर तक रजिस्ट्रीकृत मामलों की संख्या 478 है ।

4.4.1 यह सामान्यतः स्वीकृत मानदंड है कि प्रभारित न्यायालय फीसों की ऊपरी सीमा या अधिकतम सीमा होनी चाहिए और वह सिद्धांत 1870 के

⁸ सा.का.नि.सं. 387(अ) प्रतिस्पर्धा अपील अधिकरण (अपील फाइल करने का प्रारूप और फीस तथा प्रतिकर आवेदन फाइल करने की फीस) नियम, 2009 का नियम 4(2).

न्यायालय फीस अधिनियम सहित लगभग सभी न्यायालय फीस अधिनियमों में अपनाया गया है। अश्वथनारायण शेट्टी वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने इंगित किया कि ऐसी अधिकतम सीमा का अभाव “मनमानेपन के जोखिम के सन्निकट” होगा। उच्चतम न्यायालय में कंपनियों द्वारा फाइल की गई अपीलों को भी उक्त सिद्धांत द्वारा शासित होना चाहिए और कंपनियों या अन्यो द्वारा फाइल की गई सिविल अपीलों के किसी प्रवर्ग की बाबत उस सिद्धांत से विमुक्त करना उचित और बुद्धिसंगत नहीं होगा।

4.4.2 यह रोचक है कि सैन्ट्रल कोलफील्ड लि. बनाम जायसवाल कोल कं. (ए. आई. आर. 1980 एस. सी. 2125) वाला मामला यह दृष्टांत प्रस्तुत करता है कि कैसे अधिकतम सीमा के बिना न्यायालय की ऊंची मात्रा ने पब्लिक सेक्टर उपक्रमों को अपील फाइल करने में समस्याएं कारित किया। उच्चतम न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया, “यदि केन्द्रीय सरकार या इसके अभिकर्ता ने यह पता लगाया कि न्यायालय फीस घोर कमरतोड़ थी तो किसी भी व्यक्ति को लोगों के लिए सस्ते न्याय के संवर्धक के रूप में सरकार से यह प्रत्याशा करनी चाहिए कि आर्थिक न्याय और सभ्य प्रक्रियागत विधिशास्त्र से संगत न्यायालय फीस के मापमान को घटाकर उसे एकरूप विधान बनाने का बीड़ा उठाना चाहिए। (पैरा 3)

4.5 आयोग इस सुस्थिर सिद्धांत का पुनः उल्लेख करना चाहता है कि न्यायालय फीस को न्यायालय चलाने के लिए राजस्व के मुख्य स्रोत के रूप में नहीं देखा जाना चाहिए। यह धिसी-पिटी बात है कि सुशासन की आवश्यक लोकतांत्रिक प्रणाली का संप्रभु कृत्य होने के कारण न्याय-

प्रशासन की लागत का मूल्यांकन उगाहे गए न्यायालय फीस के रूप में नहीं किया जा सकता है । दूसरे, न्यायालय फीस को तकलीफदेह मुकदमेबाजी को रोकने के साधन के रूप में नहीं देखा जाना चाहिए । यदि मुकदमेबाजी का एक भाग तकलीफदेह है तो न्यायालय की मात्रा में असामान्य वृद्धि असली वादकारियों को कठिनाई पैदा करेगा । इस संदर्भ में, आयोग यह उल्लेख करना चाहता है कि लागत और सिविल प्रक्रिया संहिता के समुचित संशोधन के विषय पर एक पृथक् अध्ययन कर रहा है जिससे कि न्यायालय निरर्थक और तकलीफदेह मुकदमों पर भारी लागत अधिरोपित करने की स्थिति में होंगे ।

5. विदेशों में स्थिति

5.1 आयोग ने इस बात पर ध्यान दिया है कि सार्क देश, यूनाइटेड किंगडम, कनाडा, आदि समेत अधिकांश देशों में कारपोरेट के लिए कोई पृथक् न्यायालय फीस विहित नहीं की गई है। तथापि, आस्ट्रेलिया⁹ और न्यू साउथ वेल्स में, कारपोरेट कतिपय मामलों की बाबत अन्य वादकारियों द्वारा संदेय न्यायालय फीस की रकम का दोगुना संदत्त करने के दायी है।

⁹ फेडरल मजिस्ट्रेट विनियम, 2000, कानूनी नियम, 2000 सं. 102. विधायी प्रारूपण और प्रकाशन कार्यालय, एटार्नी जनरल विभाग, कैनबरा द्वारा यथा संशोधित और प्रारूपित (अनुसूची 1)

6. न्यायालयों की सुगम पहुंच और न्यायालय फीस

6.1 सिफारिशें करने के पहले, आयोग संसदीय स्थायी समिति की सोच पर ध्यान देना चाहता है कि गरीब और निःसहाय वादकारियों की न्यायालयों में पहुंच कम से कम लागत में होनी चाहिए। इस संदर्भ में, आयोग का यह कहना है कि कारपोरेट-अपीलार्थियों से अतिरिक्त न्यायालय फीस राजस्व वसूल करने और उस थोड़े राजस्व को निर्धनों को सहायता देने के प्रयोजन के लिए लगाने के बजाय गरीब वादकारियों की लागत को कम करने और विधिक सहायता की गुणता को सुधारने के वांछित उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए पहले से ही प्रवृत्त प्रणाली पर पुनः विचार करने और परिष्कृत करने पर ध्यान दिया जाना चाहिए। लागत प्रभावी और न्याय की परेशानी-मुक्त पहुंच सुनिश्चित करने के लिए सरकार और न्यायपालिका को निरन्तर प्रयास करना चाहिए। निचले न्यायालयों से उच्चतर न्यायालयों तक बेहतर और सुगम पहुंच उपलब्ध कराना और ऐसे आम लोगों को जो लागत नहीं वहन कर सकते, गुणात्मक विधिक सहायता विस्तारित करना न्यायालय फीस की मात्रा को संबद्ध किए बिना प्राप्तव्य लक्ष्य है। इस प्रशंसनीय विषय को स्वतंत्र रूप से कार्यान्वित करना है।

6.2 हम गरीब और आर्थिक रूप से असहाय व्यक्तियों और अन्य लोगों को विधिक सुविधा और सहायता बढ़ाने से संबंधित विधि के सुसंगत उपबंधों और तंत्र का संक्षेप में उल्लेख करेंगे। सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 का आदेश 33 अकिंचन व्यक्ति को तामीली या प्रक्रिया के लिए न्यायालय फीस या किसी फीस के संदाय के बिना वाद फाइल करने के लिए समर्थ बनाता है। किसी अकिंचन व्यक्ति को ऐसे व्यक्ति के रूप में परिभाषित किया गया है जिसके पास विहित न्यायालय फीस का संदाय

करने के लिए पर्याप्त साधन (कुर्की से उन्मुक्त भिन्न संपत्ति) नहीं है। न्यायालय के मुख्य अनुसचिवीय अधिकारी को पहली नजर में वह शक्ति प्रदत्त करके अकिंचन व्यक्ति के साधनों की जांच को आसान बनाया गया है। इसके अतिरिक्त, न्यायालय इस बाबत उच्च न्यायालय द्वारा बनाए गए नियमों के अनुसार वकील रहित अकिंचन व्यक्ति को एक अधिवक्ता प्रदान कर सकता है। अपील के संबंध में, न्यायालय फीस के संदाय के बिना अकिंचन व्यक्ति को अपील फाइल करने में समर्थ बनाने हेतु सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 44 में समरूप उपबंध है। जहां किसी पक्षकार को उस डिक्री जिससे अपील की गई है, न्यायालय में अकिंचन व्यक्ति के रूप में वाद लाने या अपील करने की अनुज्ञा दी गई थी वहां इस प्रश्न की बाबत कि क्या वह अकिंचन व्यक्ति है या नहीं, पर कोई अतिरिक्त जांच करना आवश्यक नहीं होगा, यदि पक्षकार यह कहते हुए एक शपथपत्र फाइल करता है कि वह डिक्री की तारीख से अकिंचन व्यक्ति नहीं रह गया है।

6.3 विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम, 1987 ने गरीब और जरूरतमंद व्यक्तियों को विधिक सहायता देने की व्याप्ति को बढ़ाया है और पात्र पक्षकारों को विधिक सुविधा और सेवा बढ़ाने के लिए कानूनी मंच का सृजन किया है। शीर्षस्थ स्तर पर भारत के मुख्य न्यायमूर्ति के मुख्य पैटर्न और उच्चतम न्यायालय के वरिष्ठतम न्यायाधीश के कार्यपालन अध्यक्ष के रूप में एक राष्ट्रीय विधिक सेवा प्राधिकरण है। एक अन्य वरिष्ठ न्यायाधीश की अध्यक्षता वाली एक उच्चतम न्यायालय विधिक सेवा समिति है जिसके दस सदस्यों में महा अटर्नी, भारत सरकार के संबद्ध मंत्रालयों/विभागों के अधिकारी और उच्चतम न्यायालय में वकालत कर रहे अधिवक्ता सम्मिलित

हैं। केन्द्रीय प्राधिकरण (नाल्सा) के कृत्य उक्त अधिनियम की धारा 4 में विनिर्दिष्ट हैं। अधिनियम राज्य विधिक सेवा प्राधिकरण, उच्च न्यायालय विधिक सेवा समिति, जिला विधिक सेवा प्राधिकरण और तालुक विधिक सेवा समिति के गठन का भी उपबंध करता है। प्रत्येक प्राधिकारी से विधिक सहायता निधि स्थापित करने की अपेक्षा है। ऐसी निधियों के मुख्य संघटक नाल्सा और राज्य सरकारों द्वारा दिए गए अनुदान हैं। इसके अतिरिक्त, न्यायालयों के विधिक सेवा प्राधिकरण के नामे लागत देने के निदेश के कारण इन निकायों को भारी रकम प्राप्त होती है। अधिकांश राज्यों में विधिक सेवा प्राधिकरणों के पास व्यय करने के लिए पर्याप्त निधियां हैं किन्तु कई राज्यों में अवसंरचना की कमी है। तेरहवें वित्त आयोग की सिफारिशों के परिणामस्वरूप विधिक सेवा प्राधिकरणों को पर्याप्त रकम के आबंटन से अवसंरचनात्मक सुविधाओं में सुधार होना निश्चित ही है।

6.4. विधिक सेवाओं के हकदार व्यक्तियों का विनिर्देश विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम, 1987 की धारा 12 में है। धारा 12 के अधीन ऐसा प्रत्येक व्यक्ति जिसे कोई मामला फाइल करना है या प्रतिवाद करना है, इस अधिनियम के अधीन विधिक सेवा का हकदार होगा यदि वह व्यक्ति - (क) अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति का सदस्य है; (ख) मानव व्यापार का शिकार व्यक्ति है; (ग) महिला या बालक है; (घ) निर्योग्यता से ग्रस्त व्यक्ति है; (ङ) सामूहिक आपदा, हिंसा, प्राकृतिक संकट आदि का शिकार होने के कारण अनर्जित कमी की परिस्थितियों के अधीन व्यक्ति है; च) औद्योगिक कर्मकार है; (छ) संरक्षणात्मक गृह या किशोर गृह या मनोवैज्ञानिक अस्पताल की अभिरक्षा सहित, अभिरक्षा का व्यक्ति है और

(ज) 50,000/- रुपए से कम की वार्षिक आय वाला व्यक्ति है ।

6.4.2 धारा 13 के अनुसार, ये व्यक्ति विधिक सेवाएं पाने के हकदार हैं, बशर्ते संबद्ध प्राधिकारी का यह समाधान हो जाए कि ऐसे व्यक्ति के पास अभियोजन चलाने या प्रतिवाद करने का प्रथमदृष्टया मामला है ।

6.5 “विधिक सेवा” पद के अंतर्गत किसी न्यायालय या अन्य प्राधिकरण या अधिकरण के समक्ष किसी मामले या अन्य विधिक कार्यवाही के संचालन में कोई सेवा देना और किसी विधिक मामले में सलाह देना भी है । उच्चतम न्यायालय विधिक सेवा समिति और उच्च न्यायालय तथा जिला स्तरों की अन्य समितियों के पास ऐसे अधिवक्ताओं का पैनल है जिनसे धारा 12 में विनिर्दिष्ट पात्र व्यक्तियों को विधिक सहायता देने की अपेक्षा है । ऐसे पक्षकार जो विधिक सेवा प्राधिकरण/समिति के पास आवेदन करते हैं, के कुछ मामले शीघ्र न्याय सुनिश्चित करने के लिए लोक अदालतों को भी निर्दिष्ट किए जाते हैं । नाल्सा ने हाल ही में निःशुल्क और सक्षम विधिक सेवा, 2010 की एक स्कीम विरचित की है । विधिक सहायता के हकदार व्यक्तियों द्वारा उच्चतम न्यायालय विधिक सेवा समिति को आवेदन करने की प्रक्रिया को कुल मिलाकर परेशानी मुक्त बनाया गया है । विभिन्न स्तरों पर विधिक सेवा प्राधिकरणों और समितियों के तत्वावधान में नियमित रूप से लोक अदालतें आयोजित की जाती हैं ।

6.6 जैसाकि पहले कहा गया है, विधिक सहायता और विधिक सेवा का विस्तार उगाहे गए न्यायालय फीस राजस्व पर निर्भर नहीं बनाया गया है और न ही बनाया जाना चाहिए । मोटे तौर पर, निवारकात्मक न्यायालय फीस का उद्देश्य नहीं है । किसी वादकारी विशेषकर औसत व्यक्ति जो

विधिक सहायता का पात्र नहीं है, की वास्तविक समस्या विधिक फीस की ऊंची लागत और अधिवक्ता के कार्यालय में प्रभारित अन्य व्यय हैं। कुछ हद तक, इस समस्या का निदान विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम, 1987 के उपबंधों से होता है। वहीं, कुछ ऐसी समस्या पैदा होती है जिन्हें संविधान के अनुच्छेद 39क में उपवर्णित लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम, 1987 के अधीन संबद्ध प्राधिकरण/समिति द्वारा सुलझाया जा सकता है। विधि आयोग नाल्सा और उच्चतम न्यायालय विधिक सेवा समिति से जुड़े न्यायाधीशों/अधिकारियों के परामर्श के पश्चात् विद्यमान व्यवस्था में और सुधार करने के लिए सिफारिशें करने हेतु विधिक सहायता और सेवा के विषय में विचार करना चाहता है। आयोग यह भी उल्लेख करना चाहता है कि उच्चतम न्यायालय में मामलों की ई-फाइल करने का कार्य आरंभ किया गया है जो मामलों के फाइल करने के समय अपीलार्थी/याची की व्यक्तिगत उपस्थिति की आवश्यकता को दूर करेगा। तथापि, उच्चतम न्यायालय समुचित मामलों में (यद्यपि नियमों में इस प्रकार विनिर्दिष्ट रूप से यह नहीं कहा गया है) न्यायालय फीस के संदाय को दूर करने के लिए उच्चतम न्यायालय नियम, 1966 के आदेश 47 नियम 6 के अधीन अपनी शक्ति का प्रयोग कर सकता है। हम केवल यह उजागर करने के लिए इन पहलुओं को निर्दिष्ट कर रहे हैं कि उच्चतम न्यायालय और अन्य न्यायालयों द्वारा समाज के गरीब, जरूरतमंद और संवेदनशील वर्ग के लोगों को विधिक सुविधा और सहायता न्यायालय फीस की मात्रा को इससे जोड़े बिना प्रदान की जा रही है और विधिक सहायता के लिए निधियां मंजूर करके सरकार द्वारा यही नीति अपनाई जा रही है।

7 संक्षेप और सिफारिशें

7.1 उपरोक्त विमर्शित विधिक और तथ्यात्मक स्थिति को ध्यान में रखते हुए, आयोग यह मत व्यक्त करना चाहता है कि समरूप ऐसे वादकारियों के वर्ग जो कारबार करते हैं, को अलग छोड़कर अकेले कंपनी /कारपोरेटों को उच्च न्यायालय फीस के संदाय के दायित्व से नहीं बांधा जा सकता है। वहीं, न्यायालय फीस का भार वहन करने के लिए वित्तीय क्षमता पर आधारित वर्गीकरण किया जा सकता है। मोटे तौर पर, वित्तीय क्षमता का निर्धारण अंतर्वलित वाद-मूल्य या अपील के विषय वस्तु के मूल्य से किया जा सकता है। अपील के मूल्य या पण के मुख्यतः वादकारी की क्षमता से जोड़ा जा सकता है। अधिकांशतः विशेष अधिनियम के अधीन उच्च मूल्य की अपीलों में अपीलार्थी कंपनियां, फर्म, न्यास या व्यक्तियों के संगम या व्यक्ति भी हैं जो किसी कठिनाई के बिना उच्च न्यायालय फीस देने के भार का वहन कर सकते हैं। अतः, यह वांछनीय है कि न्यायालय फीस का उर्ध्व पुनरीक्षण न केवल उन अपीलार्थियों के प्रति निर्देश से जो विशुद्धतः कंपनी/कारपोरेट के विवरण के भीतर आते हैं, बल्कि अपील में अंतर्वलित विषय-वस्तु के मूल्य के आधार पर वादकारियों के अन्य प्रवर्गों पर भी प्रारंभ किया जाना चाहिए। यह युक्तियुक्त स्तर अधिकतम सीमा के विवरण के अधीन रहते हुए मूल्यानुसार न्यायालय फीस विहित कर प्राप्त किया जा सकता है। इसका यह अर्थ है वादकारी को उच्च मूल्य के वाद-विषय पर न्यायालय फीस उच्चतम सीमा के भीतर अदा करनी चाहिए। मूल्यानुसार न्यायालय फीस के मामले में, फीस दावे के मूल्य के अनुपात में संदत की जाएगी। वस्तुतः, उच्चतम न्यायालय नियम मूल्यानुसार वर्गीकरण को

अंगीकृत किया है किन्तु 2000/-रुपए के नगण्य अधिकतम सीमा को ध्यान में रखते हुए कारपोरेट सहित उन वादकारियों से उच्चतर न्यायालय फीस संगृहीत करने की कोई संभावना नहीं है जो उच्चतर न्यायालय फीस संदत्त करने का बोझ उठा सकते हैं। उच्चतम न्यायालय नियम 250/- रुपए की न्यायालय फीस विहित करता है यदि “विवादग्रस्त विषय-वस्तु के मूल्य की रकम” 20,000/- रुपए या कम है। 20,000/- रुपए से अधिक प्रत्येक 1,000/- रुपए के लिए संदेय न्यायालय फीस 5/- रुपए है जो आधा प्रतिशत बनता है। अब तक कोई समस्या पैदा नहीं हुई है। किन्तु यह 2000/- रुपए की अधिकतम सीमा है जो 60 वर्ष पहले अर्थात् उच्चतम न्यायालय के आरंभ के समय विहित की गई थी।¹⁰ अधिकतम न्यायालय फीस का पुनरीक्षण अब तक नहीं किया गया है। यह भी उल्लेखनीय है कि जहां विवादग्रस्त विषयवस्तु का रुपए में निर्धारण करना संभव नहीं है या दूसरे शब्दों में, अपील का मूल्यांकन नहीं हो सकता है वहां फीस केवल 250/- रुपए ही बनी रहती है। इस सीमा को भी बढ़ाए जाने की महती आवश्यकता है। जैसाकि पहले कहा गया है, दशाब्दियों पूर्व मूल्यानुसार विहित न्यायालय फीस की अधिकतम सीमा कई गुणा बढ़ायी जानी चाहिए जिससे कि ऐसे वादकारी जो भुगतान करने का बोझ उठा सकते हैं, अपील की विषय-वस्तु के मूल्य के आधार पर अधिक न्यायालय फीस देने का बोझ उठाएं। इस प्रकार, ऐसे वादकारी अधिकांशतः कंपनियां या अन्य विधि कारबार अस्तित्व हैं। इस प्रकार, आवश्यकता इस बात की है कि युक्तियुक्त स्तर की सीमा के अधीन रहते हुए मूल्यानुसार न्यायालय फीस

¹⁰ उच्चतम न्यायालय नियम, 1950 और 1966, तीसरी अनुसूची, भाग 2, अपीली अधिकारिता।

में आमूल-चूल वृद्धि की जाए ।

7.2 अतः, आयोग का यह मत है कि समय के काफी अंतराल और आजकल की आर्थिक वास्तविकताओं को ध्यान में रखते हुए उच्चतम न्यायालय में फाइल की जाने वाली अपीलों (सिविल) की बाबत लागू न्यायालय फीस के वर्तमान नियमों पर पुनर्विचार करने की काफी वांछनीयता है । जहां 20,000/- रुपए से अधिक पर आधा प्रतिशत बना रह सकता है (या इसे एक प्रतिशत तक बढ़ाया जा सकता है), वहीं अधिकतम न्यायालय फीस को कम से कम 1 लाख रुपए तक बढ़ाना युक्तिसंगत होगा । अर्थात्, उच्चतम न्यायालय नियम के भाग 2 के क्रम संख्या 2 के परंतुक के खंड (1) आने वाले 2000/- रुपए के अंक के स्थान पर 1 लाख रुपए (या अधिक) रखे जाने की आवश्यकता है । यह मुख्यतः हमारा सुझाव है और हम यह कहना चाहते हैं कि आयोग ने ठीक-ठीक मात्रा अवधारित करने के लिए कोई विनिर्दिष्ट परीक्षण नहीं किया है क्योंकि आयोग यह महसूस करता है कि उच्चतम न्यायालय समिति उन ब्यौरों पर समुचित रूप से विचार करेगी । इसके अतिरिक्त, 250/- रुपए की फीस को उपयुक्त रूप से बढ़ाया जाना चाहिए । विशेष इजाजत याचिकाओं के लिए फीस बढ़ाने का भी पूरा औचित्य है जो इस समय 250/- रुपए की छोटी रकम है । विशुद्ध परिणाम यह होगा कि कर/फीस मांगों के विरुद्ध कारपोरेट और अन्य कारबार सत्ताओं और अन्य वित्तीय दायित्व और माध्यस्थ पंचाट द्वारा फाइल की गई अधिकांश अपीलें वर्द्धित न्यायालय फीस की परिधि के भीतर आएंगी । वहीं, ऐसी अपीलों की बाबत जो सिविल मामलों में उच्च न्यायालय के निर्णयों से उद्भूत होती है और जहां न्यायालय फीस विचारण और अपीली दोनों प्रक्रमों पर मूल्यानुसार आधार

पर पहले से ही संदत्त की जाती है, (यथावर्द्धित) केवल नियत न्यायालय फीस प्रभारित करना विवेकपूर्ण और युक्तिसंगत होगा। हम यह भी उल्लेख करते हैं कि व्यक्तिगत कठिनाई की दशा में, संबद्ध अपीलार्थी हमेशा न्यायालय फीस की छूट के लिए उच्चतम न्यायालय में आवेदन कर सकता है।

7.3 आयोग समग्र पहलुओं पर विचार करते हुए मूल्यानुसार फीस और नियत न्यायालय फीस के संबंध में न्यायालय फीस नियमों में विहित अधिकतम की वृद्धि के लिए अपना व्यापक सुझाव अभिलिखित करता है। काफी समय अन्तराल और भारी पण के ऐसे मामले, जो वित्तीय और अन्य विशेष अधिनियमितियों के अधीन उद्भूत होने वाले मामले उच्चतम न्यायालय के समक्ष आते हैं, को ध्यान में रखते हुए, लागू न्यायालय फीस के उपयुक्त उर्ध्व पुनरीक्षण के लिए उच्चतम न्यायालय से आग्रह करना उचित और समीचीन होगा। उच्चतम न्यायालय संभवतः न्यायाधीशों की एक समिति गठित कर सकेगा और यदि आवश्यक हो, उच्चतम न्यायालय बार एसोसिएशन से परामर्श कर सकेगा। क्योंकि न्यायालय फीस से संबंधित उच्चतम न्यायालय द्वारा विरचित नियम अर्द्ध शताब्दी से अधिक समय से प्रवृत्त हैं, इसलिए पहली नजर में न्यायालय फीस को बढ़ाने का विनिश्चय उच्चतम न्यायालय पर छोड़ना उचित होगा। यह वांछनीय और उचित है कि संसद् स्वयं विधान के माध्यम से उच्चतम न्यायालय नियम का अधिक्रमण करने और फीस का मापमान विहित करने के लिए सीधे कार्यवाही न करे। आयोग की यह राय है कि संसदीय स्थायी समिति और विधि आयोग के सुझावात्मक मतों को उपदर्शित करते हुए और तीसरी अनुसूची के भाग 2 और ऐसे अन्य मदों की बाबत अधिकतम तथा नियत

न्यायालय फीस जैसा न्यायालय उचित समझे, के उर्ध्व पुनरीक्षण का सुझाव देते हुए उच्चतम न्यायालय से आग्रह करना उचित होगा ।

संघ राज्यक्षेत्र

मुख्य संघ राज्यक्षेत्र अर्थात् चंडीगढ़ और दिल्ली राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र के संबंध में, वाद, अपील, आदि के लिए लागू न्यायालय फीस की अनुसूची से संबंधित जानकारी की दिल्ली उच्च न्यायालय से प्रतीक्षा है । जहां तक संघ राज्यक्षेत्र का संबंध है, एक संक्षिप्त अनुपूरक रिपोर्ट शीघ्र ही आयोग द्वारा प्रस्तुत की जाएगी ।

ह/-

(डा. न्यायमूर्ति पी. वी. रेड्डी)

अध्यक्ष

ह/-

(न्यायमूर्ति शिव कुमार शर्मा)

सदस्य

ह/-

(अमरजीत सिंह)

सदस्य

ह/-

(डा. ब्रह्म अग्रवाल)

सदस्य-सचिव

परिशिष्ट

न्यायालय फीस की सारणी (उच्चतम न्यायालय)

भाग - 1

आरंभिक अधिकारिता

1.	वादपत्र का फाइल और रजिस्टर किया जाना	250.00
2.	लिखित कथन का फाइल और रजिस्टर किया जाना	50.00
3.	मुजराई या प्रतिदावा का फाइल और रजिस्टर किया जाना	50.00
4.	प्रतिदावा का उत्तर फाइल और रजिस्टर किया जाना	50.00
5.	प्रत्येक फोलियो के लिए आरंभिक दस्तावेज से परीक्षा और मिलान करना ।	0.50
6.	प्रत्येक फोलियो के लिए साक्षियों के अभिसाक्ष्य को लेखबद्ध करना या जहां शार्टहैन्ड में लिया गया हो अभिलेखन तैयार करना ।	0.62
7.	किसी पक्षकार के साक्षियों के अभिसाक्ष्य की प्रतिलिपि की टाइपकृत प्रतियां, पहली प्रति, फोलियो प्रति कार्बन प्रति - प्रति फोलियो .	0.50 0.12
8.	बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका से भिन्न संविधान के अनुच्छेद 32 के अधीन याचिकाएं और आपराधिक कार्यवाहियों से उद्भूत याचिकाएं ।	50.00

भाग - 2

अपीली अधिकारिता

- | | | |
|--------|--------------------------------------------------------------------------|--------|
| 1. | अपील करने के लिए विशेष इजाजत की याचिका | 250.00 |
| [1.(क) | प्रतिपक्षी प्रत्यर्थियों को सूचित करने के लिए समेकित प्रक्रिया फीस | 10.00 |
| 2. | अपील की याचिका को दर्ज और रजिस्टर करना - | 250.00 |
| | जहां विवादग्रस्त विषयवस्तु के मूल्या का रकम 20,000/- रु. या उस रकम से कम | |
| | 20,000/- रु. से अधिक प्रत्येक 1000/- रु. के लिए | 5.00 |

प्रत्येक हजार रु. या उसके भाग के लिए

यदि, जहां विवादित विषय-वस्तु को रुपए मूल्य में

आकलन करना संभव नहीं है -

परंतु -

- 1) किसी मामले में संदेय अधिकतम फीस 2000/- रु. से अधिक नहीं होगी और
- 2) जहां न्यायालय द्वारा मंजूर विशेष इजाजत द्वारा अपील की जाती है वहां अपील करने की विशेष इजाजत के लिए याचिका पर उसके द्वारा संदत्त न्यायालय फीस की रकम के लिए अपीलार्थी को क्रेडिट दिया जाएगा ।

3. कैवियट के मामले का कथन प्रस्तुत करना 20.00
4. न्यायालय के निर्णय या आदेश की - वही फीस जो मूल
पुनर्विलोकन का आवेदन कार्यवाही पर संदत्त की
गई थी ।
5. उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 के अधीन 250.00
अपील की अर्जी